बापू की शहादत / कविता

(नज़ीर बनारसी की यह नज़्म 71 साल पहले बापू की शहादत की खबर मिलते ही तत्काल कही गई थी, लेकिन दिन ब दिन अधिक मानीखेज़ होती जाती है)

तिरे मातम में शामिल हैं ज़मीन ओ आसमाँ वाले
अहिंसा के पुजारी सोग में हैं दो जहाँ वाले

तिरा अरमान पूरा होगा ऐ अम्न-ओ-अमाँ वाले
तिरे झंडे के नीचे आएँगे सारे जहाँ वाले

मिरे बूढ़े बहादुर इस बुढ़ापे में जवाँ-मर्दी
खिले हैं फूल जो सीने पे गोली के निशाँ वाले

उसी को मार डाला जिस ने सर ऊँचा किया सब का
न क्यूँ ग़ैरत से सर नीचा करें हिन्दोस्ताँ वाले

मिरे गाँधी ज़मीं वालों ने तेरी क़द्र जब कम की
उठा कर ले गए तुझ को ज़मीं से आसमाँ वाले

ज़मीं पर जिन का मातम है फ़लक पर धूम है उन की
ज़रा सी देर में देखो कहाँ पहुँचे कहाँ वाले

पहुँचता धूम से मंजिल पे अपना कारवाँ अब तक
अगर दुश्मन न होते कारवाँ के कारवाँ वाले

सुनेगा ऐ 'नज़ीर' अब कौन मज़लूमों की फ़रियादें
फ़ुग़ाँ ले कर कहाँ जाएँगे अब आह-ओ-फ़ुग़ाँ वाले

यह सप्ताह / परिपक्वता क्या होती है!

जब आप अन्य सभी में बदलाव लाने के स्थान पर स्वयम अपने आप में बदलाव लाने के लिए प्रतिबद्ध हो जाएँ तो इसका अर्थ है कि आपमें परिपक्वता आ गई है।

जब आप जो व्यक्ति जैसा है उसे वैसा ही स्वीकार करने लगें तो यह आपकी परिपक्वता का परिचायक है।

जब आप यह समझने लगें कि प्रत्येक व्यक्ति अपने अपने दृष्टिकोण के अनुसार सही है तो इसका तात्पर्य यही है कि आपकी सोच परिपक्व हो गई है।

जब आप यह सोचना सीख जाएँ कि "छोडो, जाने दो" तो समझिये कि आपमें परिपक्वता आ गई है।

जब आप किसी रिश्ते में केवल "कुछ देना है" इसलिये दें और बदले में किसी भी प्रकार की कोई आशा ना रखें तो इसका अर्थ यही है कि आपमें परिपक्वता प्रवेश कर गई है।

जब आपको यह समझ आ जाए कि जो कुछ भी आप कर रहे हैं वह अपने स्वयम के मन की शांति के लिये कर रहे हैं तो इसका

कोलंबा कालीधर

अर्थ यही है कि अब आप परिपक्व हो गये हैं।

जब आप संसार में सबके समक्ष अपनी बुद्धिमत्ता को प्रमाणित करना बंद कर दें तो इसका तात्पर्य यह है कि आप परिपक्व हो गये हैं।

जब आप लोगों में उनकी सकारात्मकता पर ही केंद्रित होने लगें तो इसका अर्थ यही है कि आप परिपक्व हो गये हैं।

जब दूसरों से स्वीकृति प्राप्त करना बन्द कर दें तो इसका तात्पर्य यह है कि आप परिपक्व हो गये हैं।

जब आप अन्य व्यक्तियों से अपना मुकाबिला करना बन्द कर दें तो इसका अर्थ है कि आप परिपक्व हो गये हैं।

जब आप स्वयम अपने आप तक सीमित रह कर भी शान्त अनुभव करने लगें तो इसका तात्पर्य यही है कि अब आप परिपक्व हो गये हैं।

जब आपको यह समझ आ जाये कि इच्छाओं और आवश्यकताओ के मध्य क्या अन्तर होता है और इच्छाओ का दमन करना सीख लें तो इसका मतलब यह है कि परिपक्व और समझदार हो गये हैं।

जब आपको लगने लगे कि भौतिक वस्तुओं का और धन-संपत्ति का मनुष्य की सुख-शान्ति और खुशियों से कोई सम्बन्ध नहीं है तो इसका अभिप्राय है कि आप परिपक्व हो गये हैं।

सरल और सकारात्मक रह कर स्वच्छन्दता का अनुभव करो और अन्य व्यक्तियों को यही अनुभव करने दो कि आप परिपक्व हो गये हैं।

बादशाह खान की गठरी....

खान अब्दुल गफ्फार खान हमेशा अपने साथ एक कपड़े की गठरी (थैला) रखते थे जिसे वह किसी को नही सौपते थे. गांधी जी अक्सर उनसे मज़ाक किया करते थे कि बादशाह थैले मे ऐसा क्या है जो किसी को हाथ भी नही लगाने देता!

एक बार कस्तूर बा ने कह दिया- आप बादशाह को थेले के बारे में मज़ाक न किया करे उनके थेले में एक पठानी सूट व जरूरत के कुछ सामान के अलावा कुछ भी नहीं है; तो बापू हंसकर बोले- %मुझे क्या पता नहीं है कि उस के पास पहनने को दो ही कपड़े है. तभी तो मैं थेला देखने की बात करता हूं. ऐसा हंसी मजाक मैं सिर्फ बादशाह के साथ ही कर सकता हूं और किसी के साथ करते मुझे किसी ने देखा है क्या ??? क्योंकि बादशाह को मैं बिलकुल अपने जैसा पाता हूँ।

जब 1969 मे गांधी जन्म शताब्दी पर इंदिरा जी के विशेष आग्रह पर इलाज के लिए भारत आये तो हवाई अड्डे पर उन्हें लेने इंदिरा जी और जे.पी.नारायण जी खुद आए।

बादशाह खान जब हवाई जहाज से बाहर आये तो उनके हाथ में वही पोटली थी जिसके बारे मे गांधी जी मजाक करते थे. मिलते ही श्रीमती गांधी ने पोटली की तरफ हाथ बढ़ाया

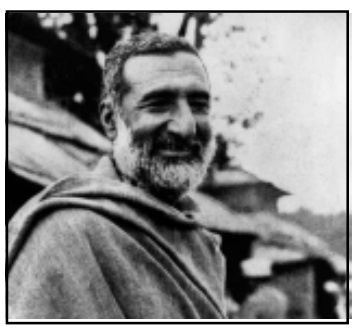

- इसे हमे दीजिये, हम ले चलते हैं. बादशाह खान ठहरे. बड़े ठंढे मन से बोले - यही तो बचा है, इसे भी ले लोगी ?

बटवारे का पूरा ग़दर्द खान साब की इस बात से बाहर आ गया. जे. पी. नारायण और इंदिरा जी दोनों ने सिर झुका लिया. जे.पी. अपने आप को संभाल न पाये, उनकी आँखों से आंसू गिर रहे थे।

1985 मे कांग्रेस स्थापना शताब्दी के अवसर पर तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने उन्हे विशेष अतिथि के रूप मे पुन: आमंत्रित किया और इसके लिए तत्कालीन पाकिस्तान के तानाशाह प्रधानमंत्री जिया उल हक़ को उन्हे भारत आने की इजाजत देने के लिए कहा. जब बादशाह खान भारत आए तब भी उनके हाथो मे वही पोटली थी जो पिछली बार 1969 मे इंदिरा गांधी के आमंत्रण पर वो साथ लाये थे. राजीव गांधी इस पोटली के बारे जानते थे. उन्होने बादशाह खान से कहा-आपने कभी महात्मा गांधी और इंदिरा जी को ये पोटली को हाथ भी नही लगाने दिया लेकिन अगर आप चाहे तो क्या मै इस पोटली को खोल कर देख सकता हूँ ?

बादशाह खान ने हँस कर अपने पठानी अंदाज़ मे कहा तु तो हमारा बच्चा है... देख ले ... नही तो सभी सोचते होंगे पता नही बादशाह इस पोटली मे क्या छुपाए फिरता है।

जब राजीव गांधी ने पोटली खोल कर देखा तो उसमे सिर्फ दो जोड़ी लाल कुर्ता-पाजामा थे. 1987 मे प्रधानमंत्री राजीव गांधी सरकार द्वारा उन्हे भारत रत्न से नवाजा गया।

महात्मा गांधी के सत्य अहिंसा के सिद्धांतो का एक ऐसा पुजारी जिसका नाम तो बादशाह खान लेकिन फकीरों की तरह तमाम उम्र सिर्फ दो जोड़ी कुर्ता पाजामा के साथ जिंदगी व्यतीत की जबकि वह अलीगढ़ विश्वविद्यालय से पढ़ा लिखा, पख्तून के एक जमीदार का बेटा था और जिसका भाई लंदन से डाक्टर बन कर आया था और पख्तून का मुख्यमंत्री था।

- साइबर नज़र

भारत में पटना की सड़कों पर बिस्कुट बेचा करते थे स्वतंत्रता सेनानी बटुकेश्वर दत्त

यह हमारी विडंबना है कि हम आजादी के मतवालों में सिर्फ उन्हें याद रखते हैं, जो या तो शहीद हो गया या आजादी के बात किसी कुरसी पर बैठ गया. यह वजह है कि इस देश में फांसी पर चढ़ने वाले भगत सिंह और अंगरेजों की गोली का शिकार होने वाले चंद्रशेखर आजाद की जयंतियां तो मनाई जाती है.

मगर भगत सिंह के साथ एसेंबली में बम फोड़ने, इंकलाब-जिंदाबाद कहते हुए गिरफ्तारी देने वाले बटुकेश्वर दत्त की जयंती हमारी याददाश्त से फिसल जाती है. क्योंकि किसी तकनीकी वजह से सैंडर्स हत्याकांड और लाहौर कॉंस्पिरेसी केस से उनका नाम हट गया और उन्हें फांसी के बदले कालापानी हो गयी.

मगर क्या कालापानी भोगना, जिंदगी के अमूल्य 15-16 वर्ष किसी न किसी बहाने जेल में गुजारना, वहां टीबी का शिकार हो जाना, क्या कम बड़ा आत्मोत्सर्ग है? और फिर आजाद भारत में 18 साल तक गुमनामी और अभावग्रस्त जीवन जीते रहना, क्योंकि बटुकेश्वर मानते थे कि आजादी की लड़ाई लड़ने का कोई मुआवजा नहीं होना चाहिए. यह अजीब सी कहानी है.

दुखद तो यह है कि वह पटना शहर भी उन्हें ठीक से याद नहीं करता जहां उन्होंने अपने आधी से अधिक जिंदगी गुजार दी, जहां उनकी इकलौती संतान रहती है. आजादी के बाद उसी पटना शहर में उन्होंने कभी ठेले पर बनियान बेची तो कभी साइकिल पर घूम-घूमकर बिस्कुट बेचा, कभी सिगरेट कंपनी में काम किया तो कभी बस चलाने का नाकाम व्यवसाय किया.

ऐसा नहीं था कि लोगों को याद न हो कि भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरु और बटुकेश्वर दत्त की मशहूर चौकड़ी में से एक जिंदा है और पटना में इस हाल में रह रहा है. देश के प्रथम राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद ने कई दफा उनकी मदद करने की कोशिश की. एक बार तो सात महीने के अल्प अवधि के लिए उन्हें बिहार विधान परिषद का सदस्य भी बनाया गया, मगर स्थानीय प्रशासन की उपेक्षा और संवेदनहीन कार्यप्रणाली की वजह से राजेंद्र बाबू की कोशिशें भी बटुकेश्वर के काम न आ सकी.

पटना में जक्कनपुर में उनके पैतृक आवास की जगह पर अपार्टमेंट बना गया है, जिसका नाम बटुकेश्वर दत्त मेंशन रखा गया है। वहीं उनकी इकलौती संतान भारती बागची रहती हैं। उन्होंने मगध महिला कॉलेज में अर्थशास्त्र विभाग में व्याख्याता के रूप में कार्यकाल पूरा किया है। बटुकेश्वर का सबकुछ पटना में है। मगर वे पटना वालों के दिल में नहीं हैं। उन्हें स्नेह पंजाब में ही मिलता है। क्यों, यह सवाल पटना वालों से पूछना चाहिए।

आखिरकार जीवन के अंतिम पड़ाव पर जब वे कैंसर के शिकार हुए तो उनके पास इलाज के पैसे नहीं थे. उस वक्त वही मां उनके लिए उठ खड़ी हुई, जिन्हें उनके बेटे भगत सिंह ने फांसी पर चढ़ते वक्त कहा था, कि भले ही मैं आज मरने जा रहा हूं, मगर मेरे बाद बटुकेश्वर में मेरी आत्मा रहेगी, वही तुम्हारा बेटा होगा. और उस मां को जब पता चला कि बटुकेश्वर बीमार है तो पंजाब वे वह भागी आयी. उन्हें लेकर एम्स गयी, वहां भरती कराया. देश भर में घूम-घूम कर उनके इलाज के लिए चंदा जमा किया, छह महीने तक अस्पताल में उनके बेड के नीचे चटाई बिछा कर सोती रही. जब बटुकेश्वर नहीं बचे तो उनकी इकलौती संतान भारती का धूम-धूम से ब्याह कराया. सारे फर्ज पूरे किये.

यह सब बातें बिहार विधान परिषद से प्रकाशित पुस्तक विप्लवी बटुकेश्वर दत्त का हिस्सा हैं. लेखक भैरवलाल दास कहते हैं, पंजाब में, जहां से बटुकेश्वर का कोई नाता नहीं था, मगर सिर्फ इस वजह से कि बटुकेश्वर जिंदा भगत सिंह थे, उन्हें भरपूर स्नेह दिया जाता है, उन्हें %दत्त भगत सिंह% कह कर पुकारा जाता है. उनके इलाज में पंजाब सरकार ने भी काफी मदद की. जब उनका निधन हुआ तो फूलों से सजी गाड़ी में उनका शव पंजाब में उस जगह ले जाया गया, जहां उनके तीन साथी भगत सिंह, सुखदेव और राजगुरु की समाधि है. वहीं उनका अंतिम संस्कार हुआ और वहीं समाधि बनी. इस तरह उनकी आखिरी ख्वाहिश पूरे हुई कि मुझे मेरे दोस्तों के पास पहुंचा देना. मगर वह बिहार प्रांत जहां उन्होंने तकरीबन 27-28 साल यानी अपनी जिंदगी का आधे से अधिक वक्त गुजारा लोग उन्हें वह स्नेह नहीं मिला, जिसके वह हकदार थे. हाल में उनकी एक प्रतिमा जरूर स्थापित हुई है, और वहां आज के रोज रस्मी तौर पर माल्यार्पण वगैरह भी हो जाता है, मगर क्या बिहार के सबसे बड़े क्रांतिकारी का इतना ही धाय था. क्यों लोग पंजाब में जितना प्रेम भगत सिंह से करते हैं, बिहार में बटुकेश्वर से नहीं करते?

वे कहते हैं, दरअसल बटुकेश्वर का जन्म भले ही बंगाल में हुआ, मगर उनका अपना मकान पटना में ही रहा है. पिता कानपुर रेलवे में काम करते थे, तो उनकी पढ़ाई लिखाई कानपुर में हुई. वहां किशोरावस्था में ही ये हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी से जुड़ गये, जिसमें आजाद, भगत सिंह, राजगुरु, सुखदेव वगैरह सक्रिय थे. फिर सैंडर्स मर्डर में साथ रहे और असेंबली बम कांड में तो भगत और बटुकेश्वर ही दो किरदार थे. असेंबली बम कांड के बाद जब इंकलाब-जिंदाबाद कहते हुए भगत और बटुकेश्वर ने गिरफ्तारी दी तो इस मामले में चले मुकदमे में दोनों को उम्र कैद की सजा सुनायी गयी.

मगर जब सैंडर्स मर्डर और लाहौर कांस्पिरेसी केस के लिए स्पेशल ट्रिब्युनल शुरू हुआ तो इस मामले में 18 में से तीन अभियुक्तों का नाम तकनीकी कारणों से हटा दिया गया. उनमें बटुकेश्वर दत्त भी थे. यही वजह है कि जहां उनके तीन साथियों भगत सिंह, शिवराम राजगुरु और सुखदेव थापर को फांसी की सजा दी गयी, उन्हें असेंबली बमकांड के दोषी के रूप में उम्र कैद भुगतना पड़ा.

दोस्तों से अलग हो जाने का उन्हें ताउम्र मलाल रहा और यही वजह है कि मरने के बाद उन्होंने अपनी समाधि अपने दोस्तों के पास बनवाने की ख्वाहिश जाहिर की थी.

भैरवलाल दास कहते हैं, बटुकेश्वर अपने दोस्तों में सबसे शांत दिमाग के थे. काफी पढ़े-लिखे और तार्किक थे, इसलिए कई बार असेंबली बम कांड के मुकदमे में उन्होंने ही लीड लिया था. भगत सिंह भी उनको काफी पसंद करते थे. जुलाई, 1930 में जब भगत और बटुकेश्वर को जेल में अलग किया गया और बटुकेश्वर को दूसरे जेल भेजा जाने लगा तो भगत सिंह ने अपनी डायरी में बटुकेश्वर का आखिरी ऑटोग्राफ लिया. फिर बटुकेश्वर देश के कई जेलों से गुजरते हुए अंडमान के सेल्युलर जेल भेज दिये गये और उनके तीन साथी 1931 में फांसी पर चढ़ा दिये गये.

पटना से उनका गहरा नाता इस वजह से था, क्योंकि उनके बड़े भाई विश्वेश्वर दत्त यहां सेंट्रेल बैंक ऑफ इंडिया में काम करते थे और यहीं उनका अपना मकान था, जक्कनपुर के इलाके में.

डॉ.राजेंद्र प्रसाद की नजर हमेशा से अपने सूबे के इस क्रांतिकारी पर रहती थी. इसलिए 1936 में बिहार में जब कांग्रेस की प्रांतीय सरकार बनी तो राजेंद्र बाबू ने उनका तबादला अंडमान से पटना जेल करवा लिया और फिर उन्हें रिहाई दिलवा दी गयी, मगर बटुकेश्वर शांत बैठने वालों में नहीं थे.

फिर भारत छोड़ो आंदोलन में शामिल हो गये और फिर उन्हें जेल हो गयी. वे मोतीहारी जेल में चार साल तक रहे. उनके जेल जाने का सिलसिला हमेशा जारी रहा. जेल से छूटे भी तो टीबी के मरीज बन गये.

बहरहाल आजादी के बाद बटुकेश्वर ने अंजली दत्त से शादी की. फिर गृहस्थी की गाड़ी चलाने की कोशिश करने लगे। वे किसी आम बंगाली परिवार की तरह ही पटना में रहते थे। किसी से यह नहीं कहते कि वे क्रांतिकारी हैं। आजीविका चलाने के लिए कई तरह के काम किये, मगर उनसे कोई रोजगार हो नहीं पाया।

राष्ट्रपति बनने के बाद डॉ राजेंद्र प्रसाद को जब उनकी स्थिति का पता चला तो उन्होंने पटना डीएम से कहा कि इनके लिए यथोचित रोजगार की व्यवस्था करायी जाये। डीएम ने तय किया कि वे पटना और आरा के बीच बस चलाने का परमिट बटुकेश्वर को दे देंगे। उस वक्त लोग ऐसी परमिट के लिए ललायित रहते थे। बटुकेश्वर को डीएम ने ऑफिस बुलवाया और कहा कि हम आपके लिए रोजगार का इंतजाम करने जा रहे हैं, लेकिन पहले आपको कोई ऐसा सुबूत देना होगा जिससे जाहिर होता हो कि आप स्वतंत्रता सेनानी हैं। यह सुनना था कि बटुकेश्वर भाव-विभोर हो गये। डबडबाई आंखों से बिना कुछ कहे डीएम के कक्ष से बाहर हो गये।

राजेंद्र बाबू ने इस मामले का फोलोअप कराया तो पता चला कि ऐसा हो गया है। फिर उन्होंने डीएम को फटकारा। कहा एक तो तुम ऐसे अधिकारी हो जो इतने बड़े क्रांतिकारी को नहीं जानते और दूसरी गलती कि उससे सर्टिफिकेट मांगते हो। बहरहाल डीएम ने फिर से बुला कर बटुकेश्वर को बस चलाने का परमिट दे दिया। मगर बटुकेश्वर के पास न तो पूंजी थी और न ही बस चलाने की योग्यता लिहाजा वह व्यवसाय भी असफल रहा। एक बार फिर से वह गरीबी के दलदल में धंस गये।

अक्तूबर 1963 में जब केबी सहाय बिहार के मुख्यमंत्री बने तो न जाने क्या सोच कर बटुकेश्वर दत्त को बिहार विधान परिषद का सदस्य मनोनीत कर दिया गया। वह भी इतने छोटे कार्यकाल के लिए जो मई 1964 को पूरा हो गया। फिर वे बीमार पड़ गये। पहले पटना में इलाज चला फिर एम्स दिल्ली में। वहां 20 जुलाई, 1965 को उनका निधन हो गया।